卐 ॐ 卐

# मानव धर्म का आधार - "गायत्री मंत्र"

## ओऽम् भूःर्भुवः स्वः, तत् सवितुर्वरेण्यम्, भर्गो देवस्य धीमहि, धियो यो नः प्रचोदयात् ।

हिन्दू परिवारों में **'गायत्री-मंत्र'** को बड़ी श्रद्धा एवं आदर की दृष्टि से देखा जाता है, भले ही वह वैष्णव हो, शैव हो अथवा आर्य-समाजी किसी भी सम्प्रदाय का ही क्यों न हो । **'गायत्री-मंत्र'** को **'सावित्री-माता'** एवं **'वेद-माता'** के नाम से भी जाना जाता है। इसे आदिकाल से ही उच्च प्राथमिकता दी जाती रही है तथा सभी मंत्रों में श्रेष्ठ एवं **'महामंत्र'** माना जाता है । अतएव निम्न पंक्तियों में इस मंत्र की विशेषताओं पर प्रकाश डाला जा रहा है ।

आज परम्परा से इस मंत्र का जो अर्थ प्राप्त है और जो अनेक पुस्तकों में भी लगभग एक जैसा ही मिलता है, उसको काव्यात्मक ढंग से कुछ निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है ।

**पद्यार्थः-** सत चित तथा आनन्दमय, सर्वज्ञ सत्तावान जो ।
प्रेरक प्रकाशक सर्वव्यापक, दिव्य शक्ति निधान जो ।।
सविता अभयदाता विधाता, जो महान महान हैं ।
करते वरण के योग्य उनके तेज का हम ध्यान हैं ।।
वह विभु हमारी बुद्धियों में, विमल ब्राह्मी बल भरें ।
तन मन वचन से नित्य ही, सन्मार्ग पर प्रेरित करें ।।

**गद्यार्थ :-** "हे सत्, चित् एवम् आनन्दमय ! हे सर्वज्ञ ! जिसकी सत्ता सर्वत्र है, जो सबका प्रेरक है, जो सबका प्रकाशक है, जो सर्वव्यापक है, जो दिव्य शक्तियों का महासागर है, जिसका महान तेज सूर्यों के रूप में प्रकट है, जो अभयदाता है, सबका सर्जनहार है, जो महान से भी महान है, उस वरण के योग्य देवता के तेज का हम ध्यान करते हैं । वह विभु (परमात्मा) हमारी बुद्धियों में आत्मबल की वृद्धि करें और तन, मन एवम् वचन से नित्य ही हम सभी को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते रहें" आदि ।

**क्योंकि उपरोक्त अर्थ में इतने सारे प्रार्थना पूर्ण शब्दों जैसे "अभयदाता, सर्जनहार, दिव्य-शक्तियों के महासागर जैसे विशेषणों का प्रयोग किया गया है, अतएव यह अर्थ भावपूर्ण प्रार्थना जैसा तो लगता है, परन्तु इनमें से किसी भी शब्द का मंत्र के संस्कृत मूलपाठ में कहीं समावेश नहीं है, तथापि इस मंत्र में कोई विलक्षणता तो अवश्य है, जिसकी चर्चा आगामी पंक्तियों में क्रमशः की जा रही है।**

### भूतकाल में हिन्दू 'धर्म-दर्शन' पर अनवरत आघातः-

महाभारत काल से ब्रिटिश राज्य होने तक भारतीय 'धर्म-दर्शन' एवम् साहित्य को

प्रभावित करने वाली अनेक बड़ी-बड़ी घटनायें हुई हैं जैसे:- *(a)* महाभारत में अनेक महान शूरवीरों, बुद्धिजीवियों एवम् वैज्ञानिकों का विनाश, तत्पश्चात् एक लम्बा अन्धकार का युग, *(b)* पश्चिम एशिया से लगातार अनेक आक्रांताओं द्वारा बारम्बार आक्रमण एवं भारतीय दर्शनशास्त्रों की पाँडुलिपियों की होली जलाना, *(c)* अपहरण एवम् उनमें जोड़-तोड़ द्वारा उनकी सत्यता को नष्ट करना आदि से वस्तुस्थिति कुछ ऐसी बनी, कि प्राप्त वेद मंत्रों एवं शास्त्रों की पूर्ण सत्यता (Originality) को संदेहास्पद होने से इन्कार नहीं किया जा सकता। क्योंकि आज भौतिक-विज्ञान का युग है, अतएव भूतकाल में लुप्त हो चुके तथ्यों को नभो-भौतिकी (Astrophysics) के ज्ञान के प्रकाश में निम्न पंक्तियों में पुनः खोजने का प्रयास किया जा रहा है।

**आधुनिक नभो-भौतिकी (Astrophysics):-**

हमारी आकाशगंगा में **लगभग एक खरब सूर्य** हैं। कई सूर्य तो हमारे सूर्य से भी कई गुना बड़े हैं। इनमें से अनेक सूर्यों के हमारे सूर्य जैसे ही सौर परिवार हो सकते हैं। हमारा सूर्य अपने परिवार के साथ आकाशगंगा के केन्द्र का **22.5 करोड़ वर्ष** में एक चक्कर लगाता है। हमारी आकाशगंगा जैसी बहुत मोटे अनुमान से लगभग **दो सौ अरब** आकाशगंगाएं हैं। वैज्ञानिकों का कथन है, ***कि ये सभी आकाशगंगाएं औसतन लगभग 20,000 मील प्रति सेकंड की गति से अनन्त की ओर भागी जा रही हैं।*** हमारी आकाशगंगा की लम्बाई **एक लाख प्रकाश वर्ष** है। (एक प्रकाश वर्ष = 94 खरब किलोमीटर) हमारा सूर्य हमारी आकाशगंगा के केन्द्र बिन्दु से **32,000 प्रकाश वर्ष** की दूरी पर है, आदि आदि।

यह बात विचारणीय है, कि जब एक साधारण-सा छत का पंखा 900 चक्र प्रति मिनट की गति से परिक्रमा करता है, तब कितनी ध्वनि होती है, तो यह सहज में ही अनुमान लगाया जा सकता है, कि इतना विशाल विश्व (Universe) जो लगभग बीस हजार मील प्रति सेकंड की गति से भागा जा रहा हो, उससे कितना भयानक नाद हो रहा होगा, परन्तु यह नाद हमारे कानों को सुनायी नहीं देता, जबकि इस नाद को ऋषियों ने अपनी ध्यानावस्था में सुना और इसे **'नाद-ब्रह्म' ( महा-ध्वनि )** कहा। परन्तु यह नाद पॉप (कर्कश) संगीत जैसा नहीं था, इसीलिए इसको नाम दिया- **उद्गीथ** = ऊपर का, अर्थात् अंतरिक्ष में होने वाला **'मधुर-गीत'**।

**मंत्र निर्माण के सूत्रः-**

संस्कृत भाषा एक अत्यन्त मधुर भाषा है और इस भाषा में मंत्र का निर्माण कुछ विशेषता रखता है। ऐसा प्रतीत होता है, कि ऋषियों ने इस भाषा के वर्णमाला के ध्वनि द्वारा निर्मित सभी अक्षरों के चित्रों का समाधि अवस्था में दर्शन किया था, तत्पश्चात् मंत्रों के निर्माण में संक्षिप्त, सांकेतिक एवम् सूत्रमय शैली का प्रयोग किया। गद्य की भाँति पूरे

वाक्यों की रचना बहुधा नहीं की गयी । अत: अब इस पृष्ठभूमि में मंत्र के शब्दों की रचना एवम् उनके अर्थों को समझने का प्रयास करते हैं ।

**मंत्र का अर्थ:-**

***(a) नाम की खोज***

***"ॐ भू: भुव: स्व:"***

1. **भू:** = भूमण्डल अर्थात् हमारी पृथ्वी
2. **भुव:** = ग्रहमण्डल = नव ग्रह
3. **स्व:** = अंतरिक्ष में तीव्र गति से भागती हुई सभी आकाशगंगाएं ।

आज यह बात एक साधारण व्यक्ति भी जानता है, कि हमारी पृथ्वी, चन्द्र एवम् सभी नव-ग्रह सूर्य के चारों ओर अहर्निश चक्कर लगाते रहते हैं, साथ ही अपनी धुरी पर भी घूमते हैं एवम् खरबों सूर्यों सहित सभी आकाशगंगाएं भी अति तीव्र गति से किसी केन्द्र की परिक्रमा कर रही हैं, स्पष्ट है, कि नाद तो होगा ही । इस नाद को ऋषियों ने समाधि अवस्था में सुना, तो वे एक स्वर से पुकार उठे **"युरेका-युरेका"** (मिल गया-मिल गया)। वस्तुत: वे इस विशाल सृष्टि के सृजनकर्त्ता की खोज में निकले थे । उनका विचार था, कि इस विश्व का कर्त्ता वास्तव में कोई महान शक्तिशाली पुरुष है, परन्तु है **'अदृश्य'** एवम् **'निराकार'** । ऋषि विश्वामित्र ने अपने सभी साथी ऋषियों को सुझाव दिया, कि यह जो **'नाद' ( 'ॐ' की महा-ध्वनि )** हम सबको सुनाई दे रही है, इसे ही उस **सृजनकर्त्ता का नाम** मान लिया जाये। और तब यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हो गया तथा **'अट्ठासी हजार'** शौनकादि खोजी विद्वानों ने भी इस को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी ।

प्रणव को **अनाहद** भी कहा गया है, अर्थात् ऐसा **'नाद' ( ध्वनि )** जो बिना चोट के उत्पन्न हो रहा है । यद्यपि आकाश (Space) में हवा नहीं है, फिर भी ऋषियों ने समाधि अवस्था में इस नाद को सुना । विज्ञान भी मानता है, कि इस प्रकार का विरोधाभास सम्भव है, क्योंकि प्रकृति में परस्पर विरोधी बातें पायी जाती हैं, जैसे कि चुम्बकीय विद्युत कणों के सम्बन्ध में यह देखा गया है, कि इन कणों का व्यवहार ठोस कणों के रूप में तथा तरंगों के रूप में भी अर्थात् दोनों प्रकार से होता है । *(इस सम्बन्ध में "ॐ का प्रादुर्भाव- एक वैज्ञानिक विश्लेषण" नामक लेख तथा आकाशगंगाओं के चित्र भी देखें।*

**पहचान की विधि:-**

किसी भी व्यक्ति को यदि जानना हो, तो उसके बारे में कम से कम दो बातें अवश्य ज्ञात होनी चाहिए, पहला **'नाम'** और दूसरा **'रूप'** । अतएव उस परमात्मा का पहला पहचान चिह्न बनी **'ॐ ध्वनि'**, जिसे परमात्मा का नाम स्वीकार कर लिया गया । यही बात श्रीमद्भगवद् गीता में इस प्रकार कही गयी है **"ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म..."** (गीता 8/13) अर्थात् **ब्रह्म** का एक अक्षर का **नाम 'ॐ'** है । अब रूप की खोज पर चर्चा प्रस्तुत है ।

*(b) रूप की खोजः-*

*''तत्सवितुर्वरेण्यम्''*

1. **तत्** = वह (परमात्मा)
2. **सवितुः** = सूर्य
3. **वरेण्यम्** = वन्दन करने के योग्य (है)

इस सम्बन्ध में ऋषि विश्वामित्र मंत्र में इंगित करते हैं, कि **'तत् ( उस निराकार परमात्मा )'** का अनेकानेक सूर्यों में जो प्रकाश प्रकट है, वह वन्दन करने योग्य है । अर्थात् परमात्मा का दूसरा पहचान चिह्न सर्वसम्मति से सूर्य में प्रकट **प्रकाश** को स्वीकार कर लिया गया और इसे वरेण्य अर्थात् वन्दन करने योग्य घोषित किया गया । वरेण्य शब्द का दूसरा अर्थ होता है- 'वरण करना', 'चुनाव करना'। यह अर्थ इस संदर्भ में अधिक उपयुक्त है । चूँकि यह प्रकाश भी अनन्त काल से है एवं अनन्त काल तक रहने वाला है, इसीलिए इसे ईश्वर के दूसरे पहचान चिह्न के रूप में चुन लिया गया ।

*(c) उपासना हेतु मार्गदर्शनः-*

*''भर्गो देवस्य धीमहि''*

1. **भर्गो** = प्रकाश
2. **देवस्य** = देवता का
3. **धीमहि** = ध्यान करो

नाम-रूप की उपाधि से उस निराकार को परिभाषित करने के उपरान्त ऋषि आदेश देते हैं, कि साधको ! अब **'ॐ'** नाम का जप करते हुए उस प्रकाशस्वरूप देवता का ध्यान करो । इस प्रकार ऋषि ने ईश्वर को प्राप्त करने की स्पष्ट शब्दों में विधि का निर्देश दिया है ।

*(d) मन पर नियन्त्रण हेतु प्रार्थनाः-*

*''धियो यो नः प्रचोदयात्''*

1. **धियो** = बुद्धि
2. **यो** = जो
3. **नः** = हम सबको
4. **प्रचोदयात्** = सन्मार्ग पर प्रेरित करें ।

ध्यान करने में सबसे बड़ी बाधा मन की चंचलता होती है क्योंकि मन शीघ्र ही इधर-उधर भाग जाता है, अतएव ईश्वर प्राप्ति असम्भव हो जाती है । ऋषि ने यह अनुभव किया, कि इतना बड़ा काम अर्थात् **'ध्यानावस्था'** की प्राप्ति कर लेना कोई आसान काम

नहीं है, अत: यह कार्य ईश्वर की अनुकम्पा के बिना सफल नहीं हो सकता। परिणामस्वरूप ऋषि ने इस पंक्ति में परमात्मा से प्रार्थना करने का परामर्श दिया है, कि हे परमात्मन् ! आप मेरी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित करें (चलायें), **ताकि चंचल मन को एकाग्र किया जा सके और आपकी प्राप्ति हो जाये ।**

***योग, ध्यान, एवम् समाधि की खोज भारतीय ऋषियों की श्रेष्ठतम खोज है। ऐसी खोज विश्व साहित्य में आज तक नहीं हुई है ।***

*(e) मंत्र का सम्पूर्ण अर्थ:-*

हमारा पृथ्वी मण्डल, ग्रह मण्डल एवम् सभी आकाशगंगाओं की गतिशीलता से उत्पन्न **'ॐ'** ध्वनि ही ईश्वर का प्रथम पहचान चिह्न है अर्थात् नाम है और अनेकानेक सूर्यों में **'प्रकाश'** रूप में प्रकट परमात्मा, वन्दनीय है । उस देवता के प्रकाश का हम ध्यान करें (साथ में ॐ नाम का जप भी करें) और परमात्मा से यह प्रार्थना भी करें, कि वह हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाऐ रखें, (ताकि सद्बुद्धि हमारे चंचल मन को नियंत्रण में रख सके और साधक को 'ब्रह्मानन्द', अर्थात् 'अखण्ड-आनन्द' की अनुभूति करा दे ।)

*(f) विशेष साधना का विवरण:-*

क्योंकि **'ॐ'** ध्वनि महाकाश में प्राकृतिक रूप से सतत् गूँज रही है तथा प्रकाश भी अनादि काल से सर्वत्र व्याप्त है, अत: यदि साधक **'प्रकाश'** पर ध्यान एवम् **'ॐ'** के जप द्वारा अपने मन को इनके साथ एकाकार करने का अभ्यास करता है, तो उसका चित्त, ध्वनि एवम् प्रकाश तरंगों से अनुप्राणित हो उठता है एवम् साधक को 'अखण्ड-आनन्द' की अनुभूति हो जाती है ।

**सारांश :-**

कुछ विद्वानों का मत है, कि **'गायत्री', सूर्य ( सविता ) देवता** की उपासना का मंत्र है । यह बात ठीक भी है, क्योंकि कालान्तर में सरलीकरण प्रक्रिया के कारण उपरोक्त विश्लेषण लुप्त हो गया और फिर सूर्य देवता, जो साक्षात् प्रकट देवता हैं, जिनसे हमारा जीवन पूरी तरह से संचालित भी होता है, को प्रकाश स्वरूप **'अव्यक्त-ब्रह्म'** का प्रतीक मानकर उपासना करने का विधान जनसामान्य में प्रचलित हो गया ।

इस मंत्र की खोज उस संक्रमण काल में हुई, जब सभी विद्वान ईश्वर को निर्गुण-निराकार ही मानते थे ।

संक्षेप में यह है, कि **'गायत्री मंत्र'** एक शोध (Research) मंत्र है । इस मंत्र द्वारा ऋषि विश्वामित्र ने सर्वप्रथम ईश्वर उपासना की **'निर्गुण-निराकार'** पद्धति के स्थान पर **'सगुण-साकार'** पद्धति सुझायी थी । किसी भी नए विचार को अपने समय में प्रतिरोध का सामना तो करना ही पड़ता है और ऐसा लगता है कि जब यह विचार सर्वप्रथम प्रस्तुत किया गया होगा, तो ऋषि वशिष्ठ जैसे **'निर्गुण-निराकार'** विचार वाले उपासकों द्वारा

इसका तीव्र विरोध हुआ होगा, जैसा कि आज भी होता है । वे यह सोच ही नहीं पाते, कि यह शुद्ध गणित का समीकरण है, कि जैसे क$^2$ + ख$^2$ = 5 (और यदि क=1, तो ख =2, **अर्थात् यह ज्ञात के द्वारा अज्ञात को खोजने का एक वैज्ञानिक मार्ग है ।** ऋषि विश्वामित्र को विजय, लम्बे संघर्ष एवम् **'खण्डन-मण्डन'** के उपरान्त मिली, अर्थात् इस बीच कटुता भी काफी हुई और प्रतीक की भाषा में कहें तो ऋषि वशिष्ठ के सौ पुत्र मारे गये अर्थात् उनके द्वारा उठाए गये सैकड़ों विरोधी विचारों का खण्डन हुआ । अन्ततः ऋषि वशिष्ठ द्वारा **ऋषि विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि की उपाधि से विभूषित कर दिया गया** अर्थात् उनके इस सिद्धान्त (Thesis) को सार्वजनिक स्वीकृति दे दी गयी । **'गायत्री'** की महत्ता को स्वीकार करते हुए श्रीमद्भगवत् गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने **'गायत्री'** को अपने समकक्ष बतलाया है और कहा है-**''गायत्री छन्दसामहम्''** अर्थात् छन्दों में ''मैं गायत्री छन्द हूँ'' ।

लगता है, कि प्रतीकों के इस महान सिद्धान्त की स्वीकृति के पश्चात् ही सम्पूर्ण भारतीय ग्रन्थों की शिक्षाओं को सरस तथा जनसाधारण के लिए सरल एवम् ग्राह्य बनाने हेतु तमाम कथाओं तथा पुराणों की रचना की गई ।

**सनातन धर्म :-**

भारतीय मनीषियों ने प्रकृति का बड़ी सूक्ष्मता से अध्ययन किया तथा प्रकृति जिन नियमों पर कार्य करती है, उनको खोज निकाला । ये सभी सिद्धान्त शाश्वत हैं तथा सनातन धर्म उन सभी शाश्वत सिद्धान्तों के संग्रह का महासागर है, जिसको वेदों में संकलित किया गया है । उन अनेक सिद्धान्तों में से कुछ प्रमुख सिद्धान्त निम्न प्रकार से हैं :-

1. गति/ चक्र/ परिवर्तनशीलता/ पुनर्जन्म का सिद्धान्त
2. अनुलोम-विलोमता का सिद्धान्त
3. कर्म का सिद्धान्त
4. लोक-परलोक का सिद्धान्त
5. अन्तः करण (मन + बुद्धि + चित्त + अहंकार) की रचना
6. यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे
7. प्राण (ओज + तेज) योग साधना का आधार
8. समग्रता का सिद्धान्त
9. सूक्ष्मता का सिद्धान्त
10. यथा दृष्टि तथा सृष्टि
11. योग, ध्यान एवम् समाधि द्वारा मोक्ष प्राप्ति
12. संस्कार एवम् वर्णाश्रम व्यवस्था
13. एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति
14. माया एवम् मोक्ष का सिद्धान्त

15. चार पुरुषार्थ- धर्म, अर्थ, काम एवम् मोक्ष
16. सृष्टि अनादि है, इसका सम्पूर्ण विनाश कभी भी नहीं होता, बल्कि समय-समय पर आकाशगंगाओं का सृजन एवम् विघटन होता रहता है ।
17. निर्गुण-निराकार (अद्वैत) उपासना पद्धति (एकेश्वरवाद)
18. सगुण-साकार (द्वैत) उपासना पद्धति (अनेकेश्वरवाद)

**सनातनधर्म का विकास :-**

वस्तुतः वैदिक युग के प्रारम्भिक काल में **'निराकार'** ईश्वर की उपासना का ही विधान था, तब यह पद्धति **'अद्वैत सिद्धान्त'** पर आधारित थी । **'अद्वैत'** का अर्थ है, कि **'आत्मा'** तथा **'परमात्मा'** दोनों एक ही तत्व हैं, इनमें कोई भेद नहीं है । परन्तु इच्छा के वशीभूत होकर आत्मा माया के घेरे में आ गयी है और उसे **'असीम-परमात्मा'** तक पहुँचना है ।

उस काल में लगता है, कि उपासना के लिए निम्नांकित चार मंत्र ही प्रमुख रूप से प्रचलित थे ।

1. तत्वमसि – तत् + त्वम + असि
   वह परमात्मा + तुम + हो
   **तुम वही परमात्मा हो ।**
2. सोऽहम् – सः + अहम्
   वह (परमात्मा) + मैं (हूँ)
   **मैं वही परमात्मा हूँ ।**
3. अयम् आत्मा ब्रह्म – अयम् + आत्मा + ब्रह्म
   यह + आत्मा + ब्रह्म (है)
   **यह आत्मा ही ब्रह्म है ।**
4. अहम् ब्रह्मास्मि – अहम् + ब्रह्म + अस्मि
   मैं + ब्रह्म + हूँ
   **मैं ब्रह्म ही हूँ ।**

क्योंकि उपरोक्त चारों मंत्रों का भाव एक समान है, अतएव इन्हीं चारों मंत्रों पर एक लम्बे काल तक सतत् चिन्तन व मनन करते-करते जब साधक सम्पूर्ण प्राणी मात्र में अपने आप को देखने अर्थात् **'आत्मवत् सर्वभूतेषु'** का भाव दृढ़ कर लेता था, तब उसे सर्वत्र **'ब्रह्म'** ही **'ब्रह्म'** दिखने लगता था । ऐसी अनुभूति के पश्चात् साधक माया के घेरे से मुक्त होकर परमात्मा में लीन हो जाता था । यह मार्ग पूर्णरूपेण तर्क सम्मत वैज्ञानिक मार्ग है । **'अद्वैत'** साधना में ज्ञान-विज्ञान की भूमिका अहम् है, अर्थात् यह मार्ग **'बुद्धि प्रधान'** मार्ग है । अतः यह मार्ग जनसाधारण के लिए अत्यन्त कठिन था ।

**द्वैत साधना:-**

साधारणतया समाज के अधिकांश व्यक्ति भावना प्रधान प्रवृत्ति वाले होते हैं, अर्थात् वे भावना के प्रवाह में प्रकृति प्रदत्त आनन्द की सीमा का अतिक्रमण कर जाते हैं । अधिक स्पष्ट शब्दों में कहा जाये, तो जनसाधारण प्रकृति के संसाधनों का उपयोग करने के स्थान पर उनका उपभोग करना आरम्भ कर देता है, जिस कारण अनेकानेक कष्टों को भोगने के लिए विवश होता है । अत: उन्हें बारम्बार के जन्म-मरण के चक्र से छुड़ाने तथा ईश्वर तक पहुँचाने हेतु **'द्वैत'** उपासना का मार्ग चुना गया, क्योंकि सृजन से पूर्व की अवस्था में परमात्मा **'अद्वैत'** की स्थिति में होता है, परन्तु जब वह स्वयं को सृष्टि के रूप में विस्तीर्ण कर लेता है, तब वह **'द्वैत-भाव'** में स्थित हो जाता है । इस उपासना पद्धति में परमात्मा को माता, पिता, स्वामी, भ्राता, पुत्र एवं पति आदि मानकर पूजा जाने का विधान है, अर्थात् इस उपासना पद्धति में साधक परमात्मा से निकटता तो स्थापित कर लेता है, परन्तु उसकी स्थिति परमात्मा के समकक्ष नहीं मानी जाती । इन सम्बन्धों को बनाने में **'भावना' ( प्रेम )** एवम् **'श्रद्धा'** तथा **'विश्वास'** विशेष महत्व के हैं और **'भावना-प्रधान'** साधकों में ये भाव पहले से ही विद्यमान होते हैं। जनसाधारण की रुचि और योग्यता को ध्यान में रखते हुए द्वैत साधना का साहित्य अत्यन्त विस्तृत होता गया। ऐसा प्रतीत होता है, कि इस विशाल साहित्य समेत पूर्वकालिक अद्वैत साधना से सम्बन्धित साहित्य को कालान्तर में **'सनातन-धर्म'** के नाम से जाना जाने लगा।

**गायत्री का योगदान:-**

अब क्योंकि सामान्य साधक के लिए **'निराकार-ईश्वर'** की साधना बिना किसी अवलम्बन के बहुत कठिन थी, अतएव तत्कालीन वैज्ञानिकों (ऋषियों) ने किसी न किसी भौतिक अवलम्बन की आवश्यकता का गम्भीरता से अनुभव किया । इस अवलम्बन की कमी को गायत्री मंत्र ने पूरा किया । गायत्री मंत्र की खोज के कारण प्रकृति में उपलब्ध 'भौतिक देव शक्तियाँ जैसे- **अग्नि, पवन, इन्द्र** आदि एवम् सूक्ष्म देव शक्तियाँ जैसे-**ब्रह्मा, विष्णु, दुर्गा** आदि की मूर्तियों का निर्माण किया गया तथा उन सब की विस्तृत **पूजा-विधि** का विकास हुआ । यह द्वैत उपासना विधि हर प्रकार की क्षेत्रीय प्रकृति के अनुकूल होने के कारण आम साधक के लिए सुगम साबित हुई, अत: अत्यन्त जन-प्रिय भी हुई । सहज होने के कारण इसका प्रचार-प्रसार[a] भी पूरे विश्व में हुआ । इस प्रकार 'गायत्री मंत्र' ने एक **अभूतपूर्व महासेतु** का कार्य किया है, जिस कारण **'गायत्री' को महामंत्र, वेदमाता, सावित्रीमाता** आदि नामों से विभूषित किया गया ।

इस द्वैत उपासना पद्धति के प्रचलन के बाद भी ऋषियों ने मानव जीवन के चरम लक्ष्य 'मोक्ष' अर्थात् **'अद्वैत-मार्ग'** के विचार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी, क्योंकि उनका

---

*a (इस सम्बन्ध में पाठकगण कृपया ''विश्वव्यापी भारतीय संस्कृति'' नामक पुस्तक का अवलोकन करें। लेखक: श्री रघुनन्दन प्रसाद शर्मा- प्रकाशक, सांस्कृतिक गौरव संस्थान, सेक्टर-5, रामकृष्ण पुरम्, नई दिल्ली-22)*

मानना है कि यदि मानव की आत्मा को परमात्मा में मिलना (मोक्ष की प्राप्ति करना) है, तो अद्वैत तक तो पहुँचना ही पड़ेगा, क्योंकि दो समान तत्त्व ही आपस में घुल-मिल सकते हैं। ***इस क्रम अर्थात् अद्वैत से द्वैत के विकास की प्रक्रिया की कड़ियाँ समय के लम्बे अन्तराल के कारण लुप्तप्राय हो गयी हैं; अतः समाज में अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ प्रचलित हैं।*** आशा है कि उपरोक्त विशलेषण इन भ्रान्तियों को दूर करने मे सहायक होगा।

**पारम्परिक अर्थ की विवेचना :-**

पारम्परिक अर्थ में परमात्मा के गुणों, जैसे- शक्तिस्वरूप, ज्ञानस्वरूप एवं प्रकाशस्वरूप पर चिन्तन व मनन करने तथा परमात्मा से सद्बुद्धि की प्रार्थना की गयी है। अतएव् मनोविज्ञान के सिद्धान्त ***''यथा दृष्टि तथा सृष्टि''*** के अनुसार सामान्य साधक यदि उपरोक्त वैज्ञानिक विश्लेषण को न भी जानें, तो भी उसे कुछ न कुछ लाभ तो होगा ही। **परमात्मा सबको सद्बुद्धि प्रदान करें।**

**हरिः ॐ तत् सत् !**